



संपादकीय

“तीसरी भाषा की ग्रेडिंग: भाषा-अधिगम की सहजता या महत्त्व का क्षरण?”

शिक्षा केवल अंकों का खेल नहीं होती, वह संवेदनाओं, समझ और पहचान के निर्माण की प्रक्रिया भी है। कर्नाटक में त्रिभाषा सूत्र के अंतर्गत तीसरी भाषा जैसे हिंदी, उर्दू, संस्कृत, मराठी आदि को ग्रेडिंग प्रणाली में रखने और कुल प्रतिशत से बाहर रखने का निर्णय शिक्षा को अधिक सहज और तनावमुक्त बनाने की दिशा में एक सकारात्मक प्रयास के रूप में देखा जा सकता है। वर्तमान समय में, जब विद्यार्थियों पर अकादमिक दबाव निरंतर बढ़ रहा है, ऐसे कदम उन्हें राहत देने वाले सिद्ध हो सकते हैं। पहली दृष्टि में यह निर्णय विद्यार्थियों के लिए बोझ कम करने वाला प्रतीत होता है। अक्सर देखा गया है कि छात्र गणित, विज्ञान या प्रथम-द्वितीय भाषा के दबाव में तीसरी भाषा को औपचारिकता मानने लगते हैं। ऐसे में ग्रेडिंग व्यवस्था शायद उन्हें तनाव से राहत दे। वे भाषा को परीक्षा के दबाव से मुक्त होकर सीख सकें, यह एक सकारात्मक संभावना भी है। परंतु यहीं एक सूक्ष्म चिंता भी जन्म लेती है। क्या इससे तीसरी भाषा का महत्त्व अनजाने में कम तो नहीं हो जाएगा? जब किसी विषय के अंक कुल प्रतिशत में शामिल नहीं होते, तो विद्यार्थियों और अभिभावकों की दृष्टि में उसका स्थान स्वतः पीछे चला जाता है। कक्षा में शिक्षक का उत्साह भी कभी-कभी उसी अनुपात में प्रभावित होता है, क्योंकि मूल्यांकन की गंभीरता ही अध्ययन की प्राथमिकता तय करती है।

भाषा केवल एक विषय नहीं होती। वह संस्कृति, संवाद और सह-अस्तित्व का माध्यम होती है। हिंदी, उर्दू, संस्कृत या मराठी इनमें से प्रत्येक भाषा अपने साथ एक समृद्ध परंपरा, साहित्य और संवेदनशीलता लेकर आती है। तीसरी भाषा के रूप में इनका अध्ययन विद्यार्थियों को न केवल भाषाई विविधता से परिचित कराता है, बल्कि उनके दृष्टिकोण को भी व्यापक बनाता है।

एक शिक्षक के रूप में यह अनुभव बार-बार सामने आता है कि बच्चे भाषा को तभी गंभीरता से लेते हैं, जब उसे सीखने और समझने का वातावरण सजीव और संतुलित हो। यदि मूल्यांकन केवल औपचारिक रह जाए, तो भाषा सीखना भी औपचारिकता बन सकता है। इसके विपरीत, यदि इसे सहज, रचनात्मक और संवादात्मक तरीके से पढ़ाया जाए, तो बिना अंकों के दबाव के भी बच्चे भाषा से जुड़ सकते हैं। इसलिए प्रश्न केवल ग्रेडिंग या प्रतिशत का नहीं है, बल्कि उस दृष्टिकोण का है जिसके साथ हम भाषा को शिक्षा में स्थान देते हैं। क्या हम इसे केवल एक अतिरिक्त विषय मानते हैं, या एक ऐसी खिड़की, जिसके माध्यम से विद्यार्थी एक नए संसार से परिचित होते हैं?

समाधान शायद किसी एक छोर पर नहीं, बल्कि संतुलन में है। तीसरी भाषा के अध्ययन को बोझरहित बनाना आवश्यक है, पर उसके महत्व को बनाए रखना भी उतना ही जरूरी है। इसके लिए विद्यालयों में भाषा शिक्षण को अधिक संवादात्मक, सांस्कृतिक गतिविधियों से जुड़ा और जीवनोपयोगी बनाया जा सकता है, ताकि विद्यार्थी इसे अंक से परे जाकर अनुभव के रूप में ग्रहण करें। अंततः शिक्षा का उद्देश्य केवल अंक अर्जित करना नहीं, बल्कि मनुष्य को व्यापक और संवेदनशील बनाना है। तीसरी भाषा इस दिशा में एक महत्वपूर्ण सेतु है— इसे हल्का करना ठीक है, पर हल्का समझ लेना शायद उचित नहीं।

आखर का उक्त अंक इस बार मैसूर विश्वविद्यालय के सेवानिवृत्त प्रोफेसर स्वर्गीय प्रो. तिप्पेस्वामी जी को समर्पित है। डॉ. तिप्पेस्वामी, मैसूर विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के एक अत्यंत सम्मानित प्रोफेसर और संवेदनशील अनुवादक थे। 1973 से 2006 तक उन्होंने न केवल शिक्षण किया, बल्कि असंख्य विद्यार्थियों के मन में भाषा और साहित्य के प्रति गहरी रुचि भी जागृत की। जनवरी 2026 में 80 वर्ष की आयु में उनका निधन हुआ। यह केवल एक व्यक्ति का जाना नहीं, बल्कि हिंदी और कन्नड़ साहित्य के बीच एक सशक्त सेतु का टूट जाना था। वे उन विरले विद्वानों में थे, जिन्होंने अनुवाद को केवल भाषा परिवर्तन नहीं, बल्कि भाव और संस्कृति के आदान-प्रदान के रूप में देखा। उनके हिंदी-कन्नड़ अनुवादों ने दो भाषाओं के बीच आत्मीय संबंध स्थापित किया। केंद्रीय साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित होना उनके कार्य की सार्थकता का प्रमाण है। आज जब उन्हें स्मरण करते हैं, तो केवल एक प्राध्यापक नहीं, बल्कि एक मार्गदर्शक और एक सेतु-निर्माता की छवि सामने आती है, जिनकी कमी लंबे समय तक महसूस की जाती रहेगी।

आखर परिवार उनके प्रति अपनी श्रद्धांजली देता है।

‘आखर’ के इस अंक में शोधालेखों के साथ साथ कविता, कहानी और लेख शामिल है। आशा है आपको यह अंक पसंद आएगा। आपका स्नेह और सहयोग हमें हमेशा मिलता रहे ताकि हम ‘आखर’ के माध्यम से साहित्य की सेवा कर सकें।

इति नमस्कारन्ते !

**प्रधान संपादिका
प्रतिभा मुदलियार**



This work is licensed under CC BY-NC 4.0